वैराग्य सन्दीपनी

(गोस्वामी तुलसीदास विरचित)

Published by
International Vedanta Mission
www.vmission.org.in

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १ –

मंगलाचरन

रामबाम दीसी जानकी
लखन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्याणकर
सुरतरु तुलसी तोर।।

भगवान श्रीराम के बांयी ओर जानकीजी और दाहिनी ओर श्रीलक्ष्मण हैं। यह ध्यान सम्पूर्णरूप से कल्याणमय है। तुलसीदासजी कहते हैं कि मेरे लिए तो यह कल्पवृक्ष ही है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २ –

मंगलाचरण

तुलसी मिटै न मोह तम
किये कोटि गुन ग्राम।
हृदय कमल फूले नहीं
बिनु रबि-कुल रबि धाम।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि सूर्यकुल के सूर्य श्रीरामजी के बिना करोड़ों गुणसमूहों का सम्पादन करने पर भी अज्ञान का अन्धकार नहीं मिटता और न हृदयकमल ही प्रफुल्लित होता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३ –

भगवत्स्वरूप वर्णन

सुनत लखत श्रुति नयन बिनु
रसना बिनु रस लेत।
बास नासिका बिनु लहै,
परसे बिना निकेत।।

जो बिना कर्ण के सुनते हैं, बिना आंख के देखते हैं, बिना जीभ के रस लेते हैं, बिना नाक के सूंघते हैं और बिना शरीर (त्वचा) के स्पर्श करते हैं – वही तत्त्व श्रीरामचन्द्रजी हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

- ४ -

भगवत्स्वरूप वर्णन

अज अद्वैत अनाम
अलख रूप गुन गन रहित।
माया पति सोई राम
दास हेतु नर तन धरेउ।।

जो अजन्मा है, अद्वितीय है, नामरहित है, अलक्ष्य है, रूप और गुणों से परे हैं और माया के स्वामी हैं, वही तत्त्व श्रीरामचन्द्रजी हैं, जिन्होंने अपने भक्तों के लिए मनुष्य शरीर धारण किया है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५ –

मनुष्यशरीर महिमा

तुलसी यह तनु खेत है
मन वच कर्म किसान।
पाप–पुण्य द्वे बीज हैं
बवै सो लवै निदान।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, यह शरीर खेत है। मन, वाणी और कर्म किसान है; पाप–पुण्य दो बीज हैं। जो बोया जाएगा, वही अन्त में काटा जाएगा।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ६ –

रामपद की महिमा

तुलसी यह तनु तवा है,

तपत सदा त्रैताप।

सांति होई जब सांतिपद,

पावै राम प्रताप।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, यह शरीर तवा है, जो सदा आध्यात्मिक आदि तीन तापों से जलता रहता है। इस जलन से तभी शान्ति होती है, जब भगवान् श्रीरामजी के प्रताप से शान्तिपद की प्राप्ति हो जाती है।

वैराग्य सन्दीपनी

– ७ –

ग्रंथ की महिमा

तुलसी वेद–पुरान–मत,
पूरन सास्त्र विचार।
यह बिराग–संदीपनी,
अखिल ग्यान को सार।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, इस वैराग्य–संदीपनी में वेद–पुराणों का सिद्धान्त और शास्त्रों का पूर्ण विचार है। यह समस्त ज्ञान का सारतत्त्व है।

वैराग्य सन्दीपनी

– ८ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

सरल बरन भाषा सरल,
सरल अर्थमय मानि।
तुलसी सरलै संतजन,
ताहि परी पहिचानि।।

इसमें सरल अक्षर है, सरल भाषा है, इसे सरल अर्थ से भरी हुई मानना चाहिए। तुलसीदासजी कहते हैं कि, जो सरल हृदय के संतजन हैं, उनको इसकी पहचान हो गई है, वे इस वैराग्य–संदीपनी को सरलता से समझते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ९ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

अति सीतल अति ही सुखदाई।
सम दम राम भजन अधिकाई।।
जड़ जीवन कौ करैं सचेता।
जग महं बिचरत है एहि हेता।।

संतजन अत्यन्त शीतल स्वभाव और अत्यन्त सुखदायक होते हैं। वे मन और इन्द्रियों पर विजय पाये हुए तो हैं ही, साथ ही उनमें श्रीराम-भजन की विशेषता होती है। वे मूर्ख जीवों को सचेत करते हैं और भगवान की ओर लगाते हैं, इसी हेतु जगत में विचरण करते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १० –

सन्त–स्वभाव वर्णन

तुलसी ऐसे कहुं,
धन्य धरनि वह संत।
परकाजे परमारथी,
प्रीति लिये निबहन्त।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, वह पृथ्वी धन्य है, जहां ऐसे विरले संत होते हैं, जो पर सेवाकार्य में और परमार्थ साधन में निमग्न रहते हैं तथा प्रीति के साथ अपने इस व्रत का निर्वाह करते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ११ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

की मुख पट दीन्हे रहैं,
जथा अर्थ भाषंत।
तुलसी या संसार में,
सो बिचारजुत संत।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, जो या तो मुख पर पर्दा डाले रहते हैं अर्थात् मौन रहते हैं। अथवा केवल यथार्थ भाषण करते हैं, इस संसार में वही विवेकी संत हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १२ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

बोलै बचन बिचारि कै,
लीन्हें संत स्वभाव।
तुलसी दुःख दुर्बचन के,
पंथ देत नहिं पांव।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, संत स्वभाव से युक्त व्यक्ति विचारपूर्वक वचन बोलता है तथा वह न तो किसीका दिल दुखाता है और न ही दुष्ट वचन बोलता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १३ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

सत्रु न काहू करि गनै,
मित्र गनै नहिं काहि।
तुलसी यह मत संत को,
बोलै समता माहि।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, वह न तो किसी को शत्रु मानते है और न किसी को मित्र ही मानते है। सन्त का यही सिद्धान्त है कि वह समता में ही यानी सब को समान समझकर ही बोलता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १४ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

अति अनन्यगति इन्द्री जीता।
जाको हरि बिनु कतहुं न चीता।।
मृगतृष्ना सम जग जिय जानी।
तुलसी ताहि संत पहिचानी।।

जो सर्वथा भगवान के सिवा अन्य किसीको भी इष्ट मानकर नहीं भजता हो, इन्द्रियों पर विजय प्राप्त किए हुए हो, जिसका चित्त हरि को छोड़कर कहीं भी न लगता हो, जगत को मृगतृष्णा के समान मिथ्या जानता हो, उसे ही संत जानों।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १५ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

एक भरोसो एक बल
एक आस बिस्वास।
रामरूप स्वातीजलद
चातक तुलसीदास।।

तुलसीदासजी कहते हैं – जिसे एकमात्र भगवान का ही आश्रय है, एकमात्र बल है, एकमात्र आशा है और उन्हींका भरोसा है। जिसके लिए भगवान श्रीरामचन्द्रजी का रूप ही स्वाति नक्षत्र का मेघ है और स्वयं चातक के समान है – वह संत है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १६ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

सो जन जगत जहाज है,
जाके राग न द्वेष।
तुलसी तृष्णा त्यागि कै,
गहै सील संतोष।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, ऐसे जो राग-द्वेष से रहित, तृष्णा को त्यागकर शील और संतोष को ग्रहण किए हुए है, वह संत पुरुष लोगों को भवसागर से तारने के लिए जहाज है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १७ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

सील गहनि सब की सहनि,
कहनि हीय मुख राम।
तुलसी रहिए एहि रहनि,
संत जनन को काम।।

शील को पकड़े रहना, सब की कठोर बातों और व्यवहार को सहना; हृदय से और मुख से सदा राम के नाम तथा लीला–गुणों को कहते रहना – इस रहनी से रहना ही संतजनों का काम है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १८ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

निज संगी निज सम करत,
दुरजन मन दुख दून।
मलयाचल है संतजन,
तुलसी दोष बिहून।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, वे अपने संगियों को अपने समान बना लेते हैं; किन्तु दुर्जनों के मन का दुःख उनकी सन्निधि में दूना हो जाता है। संत तो वस्तुतः सदा चंदन के समान शीतल और दोष रहित ही है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– १९ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

कोमल बानी संत की,
स्रवत अमृतमय आह।
तुलसी ताहि कठोर मन,
सुनत मैन होइ जाइ।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, संत की वाणी कोमल होती है, उससे अमृतमय रस निःसृत होता है। उसे सुनते ही कठोर मन भी पिघले हुए मोम के समान कोमल हो जाता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २० –

सन्त-स्वभाव वर्णन

अनुभव सुख उतपति करत,
भय-भ्रम धरै उठाई।
ऐसी बानी संत की,
जो उर भेदै आइ।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, संत की वाणी ऐसी होती है कि जो सुख की अनुभूति को उत्पन्न करती है, भय और भ्रम को उठाकर अलग रख देती है और अज्ञान की हृदयग्रंथि का भेदन कर देती है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २१ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

सीतल बानी संत की,
ससिहू ते अनुमान।
तुलसी कोटि तपन हरै,
जो कोउ धारै कान।।

संत की सीतल वाणी चन्द्रमा से भी बढ़कर अनुमान की जाती है, तुलसीदासजी कहते हैं कि, जो कोई उसको अपने कानों में धारण करता है, उसके करोड़ो तापों को हर लेती है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २२ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

पाप ताप सब सूल नसावै।
मोह अंध रबि बचन बहावै।।
तुलसी ऐसे सदगुन साधू।
वेद मध्य गुन बिदित अगाधू।।

संतजन पाप, ताप और सब प्रकार के सूलों को नष्ट कर देते हैं। उनके सूर्य-सदृश वचन मोहरूपी अन्धकार का नाश कर डालते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि, साधु ऐसे सद्गुणी होते हैं। उनके अगाध गुण वेदों में विख्यात है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २३ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

तन करि मन करि बचन करि,
काहू दूखत नाहिं।
तुलसी ऐसे संतजन,
रामरूप जग माहिं।।

जो शरीर से, मन से और वचन से किसी पर दोषारोपण नहीं करते, तुलसीदासजी कहते हैं कि, जगत में ऐसे संतजन श्रीरामचन्द्रजी के ही रूप हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २४ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

मुख दीखत पातक हरै,
परसत कर्म बिलाहिं।
वचन सुनत मन मोहगत,
पूरुष भाग मिलाहिं।।

जिनका मुख दीखते ही पाप नष्ट हो जाते है, स्पर्श होते ही कर्म विलीन हो जाते है और वचन सुनते ही मन का मोह चला जाता है, ऐसे संत अनेकों जन्मों के पुण्यकर्मों से ही मिलते है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २५ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

अति कोमल अरु बिमल रुचि,
मानस में मल नाहिं।
तुलसी रत मन होइ रहै,
अपने साहिब माहिं।।

संतजन अत्यन्त कोमल और निर्मल रुचिवाले होते हैं। उनके मन में पाप नहीं होता। तुलसीदासजी कहते हैं कि, उनका मन अपने स्वामी में नित्य लगा रहता है।

वैराग्य सन्दीपनी

– २६ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

जाके मन ते उठि गई,
तिल–तिल तृष्ना चाहि।
मनसा वाचा कर्मना,
तुलसी बन्दत ताहि।।

जिसके मन से तृष्णा और चाह तिल भर भी शेष नहीं है। तुलसीदासजी मन, वचन और कर्म से उनकी वन्दना करते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २७ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

कंचन कांच हि सम गनै,
कामिनि काष्ठ पषान।
तुलसी ऐसे संतजन,
पृथ्वी ब्रह्म समान।।

जो सोने और कांच को समान समझते हैं और स्त्री को काठ-पत्थर के समान देखते हैं, अर्थात् किसी को भी भोग्यपदार्थ की तरह नहीं देखते हैं, तुलसीदासजी कहते हैं कि, ऐसे संतजन पृथ्वी में ब्रह्म के समान हैं।

वैराग्य सन्दीपनी

– २८ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

कंचन को मृतिका करि मानत।
कामिनि काष्ठ सिला पहिचानत॥
तुलसी भूलि गयो रस एहा।
ते जन प्रगट राम की देहा॥

जो सोने को माट़ी के समान मानते है और स्त्री को काठ-पत्थर के रूप में देखते हैं, तुलसीदासजी कहते हैं कि, जो इस विषयरस को भूल गए हैं, वे संतजन श्री रामचन्द्रजी के मूर्तिमान शरीर ही हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– २९ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

आकिंचन इन्द्रीदमन,
रमन राम इक तार।
तुलसी ऐसे संत जन,
बिरले या संसार।।

जो अकिंचन हैं, जो इन्द्रियनिग्रह से युक्त हैं और जो निरन्तर राम में ही रमण करते हैं, तुलसीदासजी कहते हैं कि, ऐसे संत जन इस संसार में विरले ही हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

- ३० -

सन्त-स्वभाव वर्णन

अहंवाद 'मैं' 'तैं' नहीं
दुष्ट संग नहिं कोई।
दुख ते दुख नहिं उपजै,
सुख तैं सुख नहिं होइ।।

जिसमें न तो अहंकार है, न मैं-तू या मेरा-तेरा है, जिसके कोई भी दुष्ट संग नहीं है, जिसको दुःख से शोक नहीं होता और सुख से हर्ष नहीं होता, तुलसीदासजी कहते हैं कि, वे ही इस संसार में संत जन है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३१ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

सम कंचन कांचै गिनत,
सत्रु मित्र सम दोइ।
तुलसी या संसार में,
कहत संत जन सोइ।।

जो सोने और कांच को समान समझता है तथा जिसकी दृष्टि में शत्रु और मित्र दोनों समान है, तुलसीदासजी कहते हैं कि, वे ही इस संसार में संत जन है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३२ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

बिरले बिरले पाइए,
माया त्यागी संत।
तुलसी कामी कुटिल कलि,
केकी केक अनंत।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, कलियुग में माया का त्याग कर देनेवाले संत कोई कोई ही मिलते हैं, पर मोर–मोरिनी जैसे (उपर से मीठा बोलनेवाले और मौका लगते ही सांपों को खानेवाले) कामी कुटिल लोगों का अन्त नहीं है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३३ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

मैं तैं मेट्यो मोह तम,
उग्यो आतमा भानु।
संत राज सो जानिये,
तुलसी या सहिदानु।।

जिसके आत्मारूपी सूर्य का उदय हो गया और मैं तू रूप अज्ञानान्धकार का नाश हो गया, तुलसीदासजी कहते हैं कि, उसे संत शिरोमणि जानना चाहिए, क्योंकि यही उसकी पहिचान है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३४ –

सन्त-महिमा वर्णन

को करनै मुख एक,
तुलसी महिमा संत की।
जिन्ह के बिमल विवेक,
सेस महेस न कहि सकत।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, एक मुख से संत की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है। जिनके मलरहित विशुद्ध विवेक है, वे सहस्रमुख वाले शेषजी और पंचमुख महेश भी उसका कथन नहीं कर सकते।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३५ –

सन्त–महिमा वर्णन

महि पत्री करि सिंधु मसी,
तरु लेखनी बनाइ।
तुलसी गनपत सों तदपि,
महिमा न लिखी जाइ।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, संत की महिमा इतनी अपार है कि पृथ्वी को कागज, समुद्र को दावात और कल्पवृक्ष को कलम बनाकर भी, गणेशजी से भी उनकी महिमा नहीं लिखी जा सकती।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३६ –

सन्त–महिमा वर्णन

धन्य धन्य माता पिता,
धन्य पुत्र बर सोइ।
तुलसी जो रामहि भजे,
जैसेहुं कैसेहु होइ।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, उनके माता पिता धन्य धन्य हैं, और वही श्रेष्ठ पुत्र धन्य है, जो जैसे–कैसे भी भगवान श्री रामचन्द्रजी का भजन करता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३७ –

सन्त–महिमा वर्णन

तुलसी जाके बदन ते,
धोखेहुं निकसत राम।
ताके पग की पगतरी,
मेरे तन को चाम।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, जिसके मुखसे धोखे से भी 'राम' नाम निकल जाता है, उसके पग की जूती मेरे शरीर के चमड़े से बने।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३८ –

सन्त–महिमा वर्णन

तुलसी भगत सुपच भलौ,
भजै रैन दिन राम।
उंची कुल केहि काम को,
जहां न हरि को नाम।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, भक्त चाण्डाल भी अच्छा है, जो रात–दिन भगवान श्री रामचन्द्रजी का भजन करता है; जहां श्री हरि का नाम न हो, वह उंचा कुल किस काम का।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ३९ –

सन्त–महिमा वर्णन

अति उंचे भूधरनि पर,
भुजगन के अस्थान।
तुलसी अति नीचे सुखद,
ऊख अन्न अरु पान।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, बहुत उंचे पहाड़ों पर विषधर सर्पों के रहने के स्थान होते हैं और बहुत नीची जगह में अत्यन्त सुखदायक ऊख, अन्न और जल होता है। वैसे ही उंचे कुल में भजनरहित होने पर अहंकार, काम, क्रोधादि और भजनयुक्त नीच कुल में भी भक्ति, शान्ति आदि होते है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४० –

सन्त–महिमा वर्णन

अति अनन्य जो हरि को दासा।
रटै नाम निसिदिन प्रति स्वासा।।
तुलसी तेहि समान नहिं कोई।
हम नींके देखा सब कोई।।

जो हरि का अनन्य सेवक है और रात–दिन प्रत्येक स्वास में उनका नाम रटता है, तुलसीदासजी कहते हैं कि उसके समान कोई नहीं है, मैंने सबको अच्छी तरह देख लिया है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४१ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

जदपि साधु सब ही बिधि हीना।
तद्यपि समता के न कुलीना।।
यह दिन रैन नाम उच्चरै।
वह नित मान अगिनि महं जरै।।

साधु यदि सभी प्रकार से हीन भी हो तो भी कुलीन की उसके साथ तुलना नहीं की जा सकती; क्योंकि साधु दिन-रात भगवान के नाम का उच्चारण करता है और कुलीन नित्य अभिमान की अग्नि में जला करता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४२ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

दास रता एक नाम सों,
उभय लोक सुख त्यागि।
तुलसी न्यारो ह्वै रहै,
दहै न दुख की आगि।।

भगवान का सेवक पृथ्वी और स्वर्ग दोनों लोकों का सुख त्यागकर एकमात्र भगवन्नाम में ही प्रेम करता है। तुलसीदासजी कहते हैं कि, वह संसार की आसक्ति छोड़कर रहता है, इसलिए दुःख की अग्नि में नहीं जलता।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४३ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

रैनि को भूषन इंदु है,
दिवस को भूषन भानु।
दास को भूषन भक्ति है,
भक्ति को भूषन ग्यानु।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, रात्रि की शोभा चन्द्रमा से है, दिन की शोभा सूर्य से है, भक्त की शोभा भक्ति से है और भक्ति का भूषण ज्ञान है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४४ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

ग्यान को भूषन ध्यान है,
ध्यान को भूषन त्याग।
त्याग को भूषन शांतिपद,
तुलसी अमल अदाग।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि, ज्ञान की शोभा ध्यान से है, ध्यान की शोभा त्याग है। त्याग की शोभा शान्तिपद से है, जो सर्वथा निर्मल और निष्कलंक भगवत्स्वरूप है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४५ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

अमल अदाग शांतिपद सारा।
सकल कलेश न करत प्रहारा।।
तुलसी उर धारै जो कोई।
रहै अनंद सिंधु महं सोई।।

यह निर्मल और निष्कलंक शान्तिपद ही सार तत्त्व है। इसकी प्राप्ति होने पर कोई भी क्लेश प्रहार नहीं करते। तुलसीदासजी कहते हैं कि जो कोई उसे हृदय में धारण कर लेता है, वह आनन्दसागर में निमग्न रहता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४६ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

बिबिध पाप सम्भव जो तापा।
मिटहि दोष दुख दुसह कलापा।।
परम सांति सुख रहै समाई।
तहं उतपात न भेदै आई।।

विविध पापों से उत्पन्न जो कष्ट तथा जो दोष एवं असह्य दुःखसमूह हैं, वे मिट जाते हैं और वह उस परं शान्तिरूप सुख में समा जाता है कि जहां कोई भी उत्पात आकर प्रवेश नहीं कर सकता।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४७ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

तुलसी ऐसे सीतल संता।
सदा रहै एहि भांति एकंता।।
कहा करै खल लोग भुजंगा।
कीन्ह्यौ गरल–सील जो अंगा।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि ऐसे शीतल शान्त संत सदा इसी प्रकार एकान्त में अर्थात् एक शान्ति रूप परमात्मपद में ही निवास करते हैं। जिन्होंने अपने अंगों को विषस्वभाव बना लिया है, ऐसे दुष्टलोग उन संतो का कुछ नहीं बिगाड़ सकते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४८ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

अति सीतल अतिही अमल,
सकल कामना हीन।
तुलसी ताहि अतीत गनि,
वृत्ति सांति लयलीन।।

जो अत्यन्त शीतल, अत्यन्त ही निर्मल तथा समस्त कामनाओं से रहित होता है और जिसकी वृत्ति शान्ति में लवलीन रहती है, तुलसीदासजी कहते हैं कि उसीको गुणातीत समझना चाहिए।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ४९ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

जो कोई कोप भरे मुख बैना।
सन्मुख हतै गिरा–सर पैना।।
तुलसी तउ लेस रिस नाहीं।
सो सीतल कहिए जग माहीं।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि यदि कोई क्रोध में भरकर मुख से कठोर वाणी बोले और सामने ही वचनरूपी तीखे बाणों की वर्षा करे तो भी जिसको लेशमात्र भी रोष न हो, उसीको जगत में संत कहते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५० –

सन्त–स्वभाव वर्णन

सात दीप नव खण्ड लौ,
तीनि लोक जग माहिं।
तुलसी सांति समान सुख,
अपर दूसरो नाहिं।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि सातों द्वीप, नव खण्ड, तीनों लोक और जगतभर में शान्ति के समान दूसरा कोई सुख नहीं है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५१ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

जहां सांति सतगुरु की दई।
तहां क्रोध की जर जरि गई।।
सकल काम वासना बिलानी।
तुलसी बहै सांति सहिदानी।।

जहां सद्गुरु की दी हुई शान्ति प्राप्त हुई कि वहीं क्रोध की जड़ जल गई और समस्त कामना और वासनाएं बिला गई। तुलसीदासजी कहते हैं कि यही शान्ति की पहचान है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५२ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

तुलसी सुखद सांति को सागर।
संतन गायो करन उजागर।।
तामें तन मन रहै समोई।
अहं अगिनि नहिं दाहैं कोई।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि जिसे संतो ने सुखद, शान्ति का समुद्र और ज्ञान का प्रकाश करनेवाला बतलाया है, उसमें यदि कोई तन–मन से समा जाय तो उसे अहंकार की अग्नि किसी प्रकार नहीं जला सकती।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५३ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

अहंकार की अगिनि में,
दहत सकल संसार।
तुलसी बांचै संतजन,
केवल सांति अधार।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि अहंकार की अग्नि में समस्त संसार जल रहा है। केवल संतजन ही शान्तिपद का आश्रय लेने के कारण उस अग्नि से बचते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५४ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

महा सांति जल परसि कै,
सांत भए जन जोइ।
अहं अगिनि ते नहिं दहैं,
कोटि करै जो कोई।।

जो संत जन महान् शान्तिरूप जल को स्पर्श करके शान्त हो गए हैं, वे अहंकार की अग्नि से नहीं जलते, चाहे कोई करोड़ों उपाय क्यों न कर ले!

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५५ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

तेज होत तन तरनि को,
अचरज मानत लोइ।
तुलसी जो पानी भया,
बहुरि न पावक होइ।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि अहंकाररहित संत के शरीर का तेज सूर्य समान हो जाता है, लोग उसे देखकर आश्चर्य मानते हैं, परंतु शान्ति के द्वारा जो जल के समान शीतल हो गया है, उसमें फिर अहंकाराग्नि का उदय नहीं हो सकता।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५६ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

जद्यपि सीतल सम सुखद,
जग में जीवन प्रान।
तदपि सांति जल जनि गनौ,
पावक तेज समान।।

यद्यपि वह शान्तिपद शीतल, सम तथा सुखदायक है और जगत में संतो का जीवन–प्राण है तथापि उसे साधारण जल के समान मत समझो, जल के समान शीतल होने पर भी उसका तेज अग्नि के समान है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५७ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

जरै बरै अरु खीझि खिझावै।
राग द्वेष महं जनम गंवावै।।
सपनेहुं सांति नहीं उन देही।
तुलसी जहां–जहां ब्रत एही।।

जो सदा अहंकार और कामना की अग्नि में जलते रहते हैं, स्वयं क्रोध करके अन्य को क्रोधित करते हैं और राग–द्वेष में ही अपना जीवन खो देते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं कि यही जिनका व्रत है, उनके जीवन में स्वप्न में भी शान्ति नहीं होती।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ५८ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

सोइ पंडित सोइ पारखी,
सोई संत सुजान।
सोई सूर सचेत सो,
सोई सुभट प्रमान।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि जिसके चित्त से राग–द्वेष का नाश हो गया है, वही पण्डित है, वही विवेकी है; वही चतुर संत है, वही शूरवीर है, वही सावधान है। वही प्रामाणिक योद्धा है।

वैराग्य सन्दीपनी

– ५९ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

सोइ ग्यानी सोइ गुनी जन,
सोई दाता ध्यानि।
तुलसी जाके चित्त भई,
राग द्वेष की हानि।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि जिसके चित्त से राग द्वेष का नाश हो गया है, वही ज्ञानी है, वही गुणवान है, वही दाता है और वही ध्यानसम्पन्न हैं।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

- ६० -

सन्त-स्वभाव वर्णन

राग द्वेष की अगिनि बुझानी।
काम क्रोध वासना नसानी।।
तुलसी जबहि सांति गृह आई।
तब उरहीं उर फिरी दोहाई।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि जब राग-द्वेष की अग्नि बुझ गई, काम, क्रोध और वासना का नाश हो गया और अन्तःकरण में शान्ति हो गई, तभी हृदय के भीतर ही भीतर रामराज्य हो गया।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ६१ –

सन्त-स्वभाव वर्णन

फिरी दोहाई राम की,
गे कामादिक भाजि।
तुलसी ज्यों रबि कें उदय,
तुरत जात तम लाजि।।

तुलसीदासजी कहते हैं कि जब हृदय में भगवान का साम्राज्य हो गया, तब कामादि दोष उसी क्षण वैसे ही भाग गए, जैसे सूर्य के उदय होते ही उसी क्षण अन्धकार लजा कर भाग जाता है।

गोस्वामी तुलसीदास रचित

वैराग्य सन्दीपनी

– ६२ –

सन्त–स्वभाव वर्णन

यह बिराग संदीपनी,
सुजन सुचित सुनि लेहु।
अनुचित बचन बिचारि के,
जस सुधारि तस देहु।।

हे सज्जनों! इस वैराग्य–संदीपनी को सावधान एवं स्थिर चित्त से सुनो और विचार कर अनुचित वचनों को जहां जैसा उचित हो सुधार दो।

ओम् तत्सत्